सोने और खाने का नाम जिंदगी नहीं है, आगे बढ़ते रहने की लगन का नाम जिंदगी है।
-प्रेमचंद

सोमवार को डॉलर की तुलना में रुपया और कमजोर होकर पहली बार 80.15 के सबसे निचले स्तर को छू गया, जो डॉलर की मजबूती को देखते हुए अप्रत्याशित भले न हो, लेकिन इसने महंगाई को नियंत्रित करने के प्रयास में जुटे रिजर्व बैंक की मुश्किलें बढ़ा दी हैं।

रुपया न्यूनतम स्तर पर

डॉलर के मुकाबले यों तो रुपया 19 जुलाई को ही 80 के पार हो गया था, लेकिन सोमवार को यह रिकॉर्ड 80.15 के स्तर को छू गया, जो कि खास तौर से अमेरिकी डॉलर की मजबूती को देखते हुए अप्रत्याशित नहीं है। विश्लेषक तो पहले ही आकलन कर रहे थे कि रुपया 80 के स्तर को पार कर सकता है। रुपये में ताजा गिरावट अमेरिकी फेडरल रिजर्व बैंक के प्रमुख के उस बयान के असर के तौर पर देखी जा रही है, जिसमें उन्होंने बेरुखी से कहा है कि फेडरल अपनी ब्याज दरों में तब तक बढ़ोतरी करता रहेगा, जब तक कि वह मुद्रास्फीति को दो फीसदी के स्तर पर नहीं ले आता। वास्तव में अमेरिकी केंद्रीय बैंक द्वारा बरती जा रही कड़ाई की वजह से डॉलर दो दशक की सबसे मजबूत स्थिति में है। यह चिंता का कारण होना चाहिए कि इस साल डॉलर के मुकाबले रुपये में सात फीसदी की गिरावट आ चुकी है और यदि अमेरिकी केंद्रीय बैंक ने निकट भविष्य में कुछ और कड़े कदम उठाए, यूक्रेन युद्ध से उपजी परिस्थितियों को जल्द नियंत्रित नहीं किया गया और कच्चे तेल के दाम प्रति बैरल सौ डॉलर से ऊपर बने रहे, तो रुपये में और गिरावट आ सकती है। कमजोर रुपया भारतीय रिजर्व बैंक के लिए दोधारी तलवार है, जिसने पिछली कुछ तिमाहियों के दौरान ब्याज दरों में बढ़ोतरी कर अर्थव्यवस्था को काबू में रखने की कोशिश की है। बेशक रुपये के कमजोर होने से भारतीय निर्यात को लाभ होता है, लेकिन यदि वैश्विक मांग कमजोर रहती है, तो निर्यात पर असर पड़ता है और इसका एक सीमित लाभ ही मिल सकता है। दूसरी ओर कमजोर रुपये के कारण हमें कच्चे तेल के आयात के लिए अधिक रकम चुकानी पड़ती है, जिससे महंगाई बढ़ने का खतरा बना रहता है। रुपये की कमजोरी से रिजर्व बैंक के गवर्नर शक्तिकांत दास के अगले दो साल में महंगाई को चार फीसदी तक लाने के लक्ष्य पर असर पड़ सकता है। यह नहीं भूलना चाहिए कि पिछले हफ्ते ही

भारत का विदेशी मुद्रा भंडार 564 अरब डॉलर के दो साल के निचले स्तर पर आ गया है और जिसके और कमजोर होने की आशंका है। यह वाकई देखना होगा कि रुपये और महंगाई को नियंत्रित करने के लिए रिजर्व बैंक अब क्या कदम उठाता है, क्योंकि उसके पास विकल्प सीमित हैं। क्या वह जल्द ही ब्याज दरों में कुछ और बढ़ोतरी करेगा?

अनमोल पानी का अवमूल्यन

जलशक्ति मंत्रालय द्वारा गठित स्वतंत्र विशेषज्ञों की एक समिति द्वारा तैयार की नई राष्ट्रीय जल नीति जल संसाधनों के प्रबंधन और संचालन के लिए एक आदर्श बदलाव पेश करती है। यह जल संसाधनों की सुरक्षा के लिए समाधान विकसित करने का एक रोडमैप प्रदान करती है।

इशा झावेरी

हमारे समाज का स्वरूप शुरुआती दिनों से ही बारिश, नदियां, तटों और समुद्रों द्वारा निर्धारित किया गया है। शास्त्रीय पुरातनता से लेकर अब्राहमिक धर्मों (इस्लाम, ईसाइयत और यहूदी) और फिर प्राचीन मेसोपोटामिया तक की कहानियां बताती हैं कि कैसे पानी ने इतिहास को बदला। भारत में मानसून जून से सितंबर के बीच 80 फीसदी बारिश लाता है, जो बचपन से लेकर संस्कृति और वाणिज्य तक को आकार देता है। बारिश के स्तर में विविधता कोई नई बात नहीं है, लेकिन जलवायु परिवर्तन के परिणामस्वरूप इसकी तीव्रता नई है।

जलवायु परिवर्तन को पानी के माध्यम से सबसे अधिक गहराई से महसूस किया जाता है। उच्च तापमान के कारण सूखा, बाढ़ और बढ़ती वर्षा परिवर्तनशीलता होती है। ग्लोबल वार्मिंग में जरा-सी भी वृद्धि होने से पानी संबंधी जोखिम के तेज होने की आशंका बढ़ जाती है। इसलिए पानी की बहुलता और संकट से जुड़ी चिंताएं नीतिगत चर्चा के केंद्र में हैं। वैज्ञानिक इस बात पर सहमत हैं कि मानसून में परिवर्तनशीलता में बदलाव जारी है और आगे भी रहेगा। भारत पहले से ही बारिश के दिनों में छोटे-छोटे अंतराल और कभी-कभी एक महीने के अंतराल पर लंबे सूखे का सामना करता रहा है। इसी वर्ष जून में असम सूखे से जूझ रहा था, लेकिन सप्ताह भर के भीतर ही वहां विनाशकारी बाढ़ आ गई। इंटरगवर्नमेंटल पैनल ऑन क्लाइमेट चेंज (आईपीसीसी) की ताजा रिपोर्ट में चेतावनी दी गई है कि जलवायु परिवर्तन के साथ इस तरह के भयंकर जोखिमों की आशंका और अधिक होगी। पानी की बढ़ती परिवर्तनशीलता (अतिवृष्टि या अनावृष्टि) समुदायों पर भारी पड़ सकती है। अतिवृष्टि के कारण महत्वपूर्ण बुनियादी ढांचों, घरों को नुकसान पहुंचता है और पानी के किनारे रहने वाले लाखों लोगों की आजीविका बाधित होती है।

नए आंकड़ों से पता चलता है कि 39 करोड़ लोग उन क्षेत्रों में रहते हैं, जो बाढ़ से सीधे प्रभावित हैं। अति निर्धन लोगों के जीवन, जीविका और

कल्याण पर बाढ़ का सबसे बुरा असर पड़ता है। पर धीमी गति से चलने वाला सूखा धीमी गति के दुख की तरह है, जो कंपनियों और शहर की उत्पादकता को बाधित कर सकता है, वनों के विनाश को बढ़ा सकता है और लोगों के स्वास्थ्य एवं कृषि प्रणालियों को नुकसान पहुंचा सकता है। अधिकांश देशों ने अपनी जलवायु परिवर्तन योजनाओं में अनुकूलन के लिए पानी को प्राथमिकता दी है। आईपीसीसी की ताजा रिपोर्ट में यह भी पाया गया है कि इन जलवायु परिवर्तन अनुकूलन रणनीतियों में से अधिकांश कृषि क्षेत्र को लक्षित करते हैं। इन सर्वव्यापी अनुकूलन रणनीतियों में से एक सिंचाई, रणनीतिक भंडार और फसलों पर पानी का अनुप्रयोग है। ये प्रयास फसलों को वर्षा की बढ़ती परिवर्तनशीलता और बढ़ी हुई गर्मी की कुछ कठिनाइयों और अनिश्चितताओं से बचाने में अहम भूमिका निभा सकते हैं। भारत में इसका सबसे स्पष्ट उदाहरण भूजल सिंचाई है, जिसमें 500 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। बेशक इससे खेतों को भारी लाभ हुआ है। लेकिन किस हद तक और कब तक?

हमने गेहूं के मामले में इसकी जांच की, जो कि अनुमानतः देश में सिंचाई की बढ़ती मांग का मुख्य कारण है। परिणाम बताते हैं कि भारत में गेहूं के पैदावार में वृद्धि के लिए सिंचाई में वृद्धि महत्वपूर्ण रही है। सिंचाई ने सूखे के प्रभाव को कम कर दिया है। हालांकि इसको लेकर संदेह है कि यह लाभ भविष्य में भी जारी रहेगा। हाल के वर्षों में सिंचाई के विस्तार से उपज लाभ धीमा हो गया है, जबकि बढ़ते तापमान और सूखे के नकारात्मक परिणाम बढ़ते जा रहे हैं। यह बताता है कि अतीत में काम करने वाली रणनीतियां भविष्य में काम नहीं कर सकतीं। इसका एक कारण यह है कि अतीत के लाभ भूजल स्रोतों पर बढ़ते दबाव की कीमत पर आए हैं। नतीजतन भूजल का व्यापक दोहन हुआ है और भूजल स्तर में गिरावट आई है।

भूजल की कमी से देश में फसलों का उत्पादन काफी घट सकता है, जिससे लोगों की खाद्य सुरक्षा, आजीविका और कल्याण प्रभावित हो सकते हैं। भूजल स्तर के घटने का एक अर्थ सूखे के मौसम में नदियों का सूखना भी है, जब पानी की सर्वाधिक जरूरत होती है। विडंबना देखिए कि जिस संसाधन ने अतीत में जलवायु परिवर्तनशीलता को कम किया है, वह ऐसी स्थितियां भी पैदा कर सकता है, जो भविष्य में प्रतिकुलताओं को और बढ़ाए। कुछ शुष्क क्षेत्रों में मुफ्त या कम लागत में पानी की आपूर्ति पानी की बहुतायत का भ्रम पैदा करती है, जिसके चलते ज्यादा पानी की खपत वाली फसलों की खेती बढ़ती है। जल निवेश भी अनजाने में असमानताओं को बढ़ा सकता है। महाराष्ट्र में सूखा प्रभावित क्षेत्रों में वर्ष 2015 से बड़े पैमाने पर कृत्रिम तालाब बनाए गए, जिसका उद्देश्य वर्षा जल संचयन को बढ़ावा देकर छोटे खेतों में कृषि को प्रोत्साहित करना था, लेकिन प्राथमिक शोध बताते हैं कि किसानों को भूजल दोहन कर तालाबों को भरने के लिए प्रोत्साहित किया गया। इससे किसानों के बीच भूजल दोहन की प्रतिस्पर्धा बढ़ी।

स्थानीय कृषि पारिस्थितिकी से निकटता से जुड़ी फसलों के उत्पादन को प्रोत्साहित करना ही विवेकपूर्ण रणनीति है, न कि उन फसलों को सब्सिडी देना, जो जलवायु संकट के प्रति संवेदनशीलता बढ़ाती है। इसके अलावा, प्रतिरोधी समुदायों के लिए पूरक समाधानों में निवेश करना-जैसे, वाटरशेड और जंगलों की रक्षा करना और पर्यावरण के प्रति संवेदनशील भूमि प्रबंधन प्रथाओं का उपयोग करना-जल प्रवाह को बढ़ा सकता है और फसल उत्पादकता व आय में वृद्धि कर सकता है।

हालांकि बदलाव अक्सर मुश्किल होता है। पानी के सफलता प्रबंधन के लिए नीति और अभ्यास में तालमेल की जरूरत होती है, जो तीन प्रतिस्पर्धी प्राथमिकताओं-दक्षता, समानता और स्थिरता-को संतुलित करते हुए उपयोग की इस पूरी शृंखला में पानी के मूल्य को पहचानती है। यही वह चुनौती है, जो वर्तमान जल प्रबंधन प्रथाओं को प्रभावित करती है। जलशक्ति मंत्रालय द्वारा स्थापित स्वतंत्र विशेषज्ञों की एक समिति द्वारा तैयार नई राष्ट्रीय जल नीति इन कमियों को पहचानती है और जल संसाधनों के प्रबंधन और संचालन के लिए एक आदर्श बदलाव पेश करती है। यह जल संसाधनों की सुरक्षा के लिए समाधान विकसित करने का एक रोडमैप प्रदान करती है। हमें सतत जल भविष्य के लिए अपने प्रयासों को दोगुना करने की आवश्यकता है। प्रयास की एक-एक बूंद मायने रखती है।

-लेखिका स्टैनफोर्ड यूनिवर्सिटी में खाद्य सुरक्षा व पर्यावरण केंद्र से जुड़ी हैं।

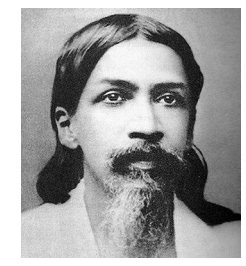

श्री अरविंद घोष
(1872-1950)

आजादी के अमृत कथन

भारत की सरकार इन दिनों एक ऐसी समस्या से जूझ रही है, जिसकी वह अनदेखी नहीं कर सकती। तथ्य यह है कि भारत के लोग जाग गए हैं।

इस देश के नागरिक अब जाग गए हैं

अपने जीवन का शुरुआती हिस्सा मैंने विदेश में बिताया है। और भारत में जो समय मैंने बिताया भी है, उसका बड़ा हिस्सा एक ऐसी जगह में बिताया, जहां मेरी मातृभाषा बांग्ला नहीं बोली जाती थी। इसलिए बांग्ला समझने के बावजूद मैं आपके सामने बांग्ला में भाषण नहीं दे सकता।

दमन और सुधार मौजूदा राजनीति के दो पहलू हैं, जो इस देश में और इंग्लैंड में भी देखा जा सकता है। यह नीति इंग्लैंड के प्रमुख राजनेताओं में से एक के द्वारा शुरू की गई है। लॉर्ड मॉर्ले कानूनी और पूर्ण शक्ति के साथ भारत में प्रशासनिक प्रमुख के रूप में खड़े हैं। शुरू से ही उनका दोहरा चरित्र रहा है। एक तरफ वह सुधारों और वैकल्पिक प्रतिनिधित्व की बात करते हैं, तो दूसरी ओर भारत में हमेशा के लिए पूर्ण सरकार बनाए रखने की आवश्यकता की बात करते हैं। सबसे पहले उन्होंने इस देश की समृद्धि के साथ विधान परिषद में गैर-सरकारी बहुमत देने की घोषणा की; उन्होंने एक निर्वाचन प्रणाली दी है, जिसमें उन्होंने एक निश्चित सीमा तक परिषद में मतदान करने की शक्ति दी है और सरकारी कामकाज पर वोटिंग का प्रावधान रखा है।

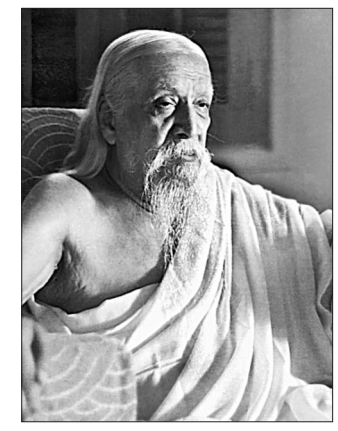

ब्रिटिशों ने समझ लिया है कि यह शिक्षित वर्ग भारत की रीढ़ है, इसलिए उनका पूरा प्रयास इसे अलग-थलग करने में है। लेकिन हमें एक होकर उस समस्या के समाधान के लिए खुद को तैयार करना चाहिए।

देखने में ये बहुत बड़ी रियायतें लगती हैं; ऐसा लगता है कि स्वशासन का एक बहुत ही महत्वपूर्ण उपाय दिया गया है; लेकिन जब हम उनकी सावधानीपूर्वक जांच करते हैं, तो ऐसा प्रतीत होता है कि लॉर्ड मॉर्ले के ये सुधार दिखावे के लिए अधिक हैं। लॉर्ड मॉर्ले ने जो व्यवस्था हमें दी है, वह दो बहुत ही गंभीर दोषों से ग्रस्त है। उनमें से एक यह कि निर्वाचित सदस्य अल्पमत में होंगे, जबकि मनोनीत गैर-आधिकारिक और आधिकारिक बहुमत में होंगे; और दूसरा यह कि इस चुनाव प्रणाली में गैर-लोकतांत्रिक सिद्धांत को अपनाया गया है, जो एक समुदाय के सिद्धांत का विशेष रूप से प्रतिनिधित्व करता है। भारत की सरकार इन दिनों एक ऐसी समस्या से जूझ रही है, जिसकी वह अनदेखी नहीं कर सकती। यह एक ऐसी चीज है, जिसका हल उनके अपने निहित स्वार्थों के जरिये कतई नहीं निकल सकता। तथ्य यह है कि भारत के लोग जाग गए हैं। वे न केवल पहले की तुलना में अधिक सजग हैं, बल्कि वे वास्तविक रूप से राजनीतिक जीवन जी रहे हैं। और वे जो मांग कर रहे हैं, उसकी ज्यादा दिनों तक अनदेखी नहीं की जा सकती। यह सरकार की एक बड़ी समस्या है कि इसके हल के लिए वह क्या करे?

ये महान परिवर्तन के समय हैं, ऐसे समय जब पुराने चिह्न नष्ट हो रहे हैं और खत्म हो चुकी शक्तियां उठ रही हैं। हम चाहे इन समस्याओं के समाधान के लिए तत्परता से काम करें या समस्या का समाधान तलाशते रहें, हमारी प्रगति तेज या धीमी होगी। भारत में शिक्षित वर्ग नेतृत्व करता है, लेकिन उसे कभी भी खुद को अलग-थलग नहीं होने देना चाहिए। उसने बड़े-बड़े काम किए हैं; उसने एक और बड़ा काम शुरू किया है, लेकिन वह इसे अकेले पूरा नहीं कर सकता है, सिर्फ उसके संयुक्त प्रयास से यह काम पूरा नहीं हो सकता। ब्रिटिशों ने समझ लिया है कि यह शिक्षित वर्ग भारत की रीढ़ है, इसलिए उनका पूरा प्रयास इसे अलग-थलग करने की दिशा में है। लेकिन हमें एक होकर यह पहचानना चाहिए कि हमारी कठिनाइयां कहां हैं, वह क्या है, जो हमारे राष्ट्र बनने में बाधक है और उस समस्या के समाधान के लिए हमें खुद को तुरंत तैयार करना चाहिए। *-23 जून, 1909 को बाकरगंज (बांग्लादेश) में दिए गए भाषण के संपादित अंश।*

दूसरा पहलू

कालाहारी मरुस्थल में किए गए शोध में यह पाया गया कि बढ़ते तापमान के कारण वहां हॉर्नबिल की प्रजनन क्षमता घट रही है।

कालाहारी में कम अंडे दे रही मादा हॉर्नबिल

शोध बताते हैं कि बढ़ते तापमान से पक्षियों की बड़ी संख्या में मौत से लेकर भोजन प्राप्त करने की मुश्किलें तक सामने आ रही हैं। शुष्क क्षेत्र में तापमान बढ़ने का पक्षियों पर ज्यादा नकारात्मक असर पड़ता है। इस क्षेत्र की चिड़िया अमूमन वर्षा होने पर अंडे देती है, जो कि साल का सबसे गर्म मौसम होता है। ऐसे समय अंडे और फिर चूजों की रक्षा करने से लेकर उनके लिए भोजन की व्यवस्था आदि करने के कारण मादा चिड़िया की गतिविधियां बढ़ जाती है।

निकोलस बी पैटिन्सन

शोध के मुताबिक, बढ़े हुए तापमान के दौरान लगातार मादा पक्षी की व्यस्त गतिविधियों का असर भोजन हासिल करने की मात्रा से लेकर खुद उस पक्षी के शरीर पर पड़ता है। अंडे देने के समय दो या तीन बार भीषण गर्मी के बीच बढ़ी हुई गतिविधियों से मादा पक्षी के अंडे देने की क्षमता बुरी तरह प्रभावित होती है।

हमने वर्ष 2008 से 2019 तक दक्षिण अफ्रीका के कालाहारी मरुस्थल में हॉर्नबिल यानी धनेश पक्षी की प्रजनन क्षमता पर शोध किया। हमने यह तो पाया ही कि इस दौरान इस पक्षी की प्रजनन क्षमता घटी है, बल्कि यह भी पाया कि इसका संबंध बढ़ते तापमान और घटती वर्षा से है।

कालाहारी में पिछले कुछ दशकों के दौरान तापमान में दो डिग्री सेंटिग्रेट से ज्यादा की वृद्धि हुई है। अगर तापमान इसी तरह बढ़ता रहा, तो 2027 तक कालाहारी में मादा हॉर्नबिल अपनी प्रजनन क्षमता खो देगी। हमने हर साल प्रजनन के समय हॉर्नबिल के 25 जोड़ों पर अध्ययन किया। ये खाली जगहों में घोंसले बनाती हैं और वर्षा काल में मादा सिर्फ एक बार अंडे देती हैं। अंडे देने से चूजों के बड़े होने तक की यह प्रक्रिया दो महीने तक चलती है। शोध की अवधि में हॉर्नबिल के जोड़े में तो कमी नहीं आई, लेकिन हमने पाया कि हर साल कोई न कोई मादा अंडे नहीं दे रही।

शुरुआती तीन सीजन-यानी 2008 से 2011 से हमने आखिरी के तीन सीजन-यानी 2016 से 2019 की तुलना करते हुए पाया कि बाद में घोंसलों में चूजों की मौजूदगी 52 फीसदी से घटकर 12 प्रतिशत और मादा हॉर्नबिल द्वारा कम से कम एक चूजे को पालने का आंकड़ा 58 फीसदी से घटकर 17 फीसदी रह गया। जाहिर है, प्रजनन में विफलता को देखते हुए स्थानीय स्तर पर हॉर्नबिल पक्षी के विलुप्त हो जाने की आशंका है। बल्कि बढ़ते तापमान और पक्षियों द्वारा उसे झेलने की क्षमता को देखते हुए अगली सदी तक दुर्लभ पक्षियों की कई प्रजातियों के, जिनमें हॉर्नबिल भी है, विलुप्त हो जाने की बात कही जा रही है।

वर्ष 2019 तक आते-आते हॉर्नबिल के घोंसलों में चूजों की मौजूदगी 52 फीसदी से घटकर 12 प्रतिशत रह गई।

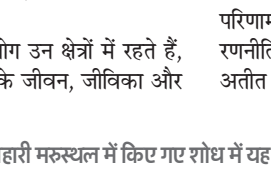

बढ़ते तापमान का सिलसिला इसी तरह जारी रहा, तो 2027 तक कालाहारी में हॉर्नबिल अपनी प्रजनन क्षमता खो देगी, और अगली सदी तक हॉर्नबिल समेत अनेक दुर्लभ पक्षी पूरी तरह विलुप्त हो जाएंगे।

आंकड़े

राज्यों में राष्ट्रीय राजमार्ग

मार्च, 2019 तक 13.4 फीसदी के साथ महाराष्ट्र में राष्ट्रीय राजमार्गों का सबसे अधिक हिस्सा था। उसके बाद उत्तर प्रदेश और राजस्थान का स्थान आता है।

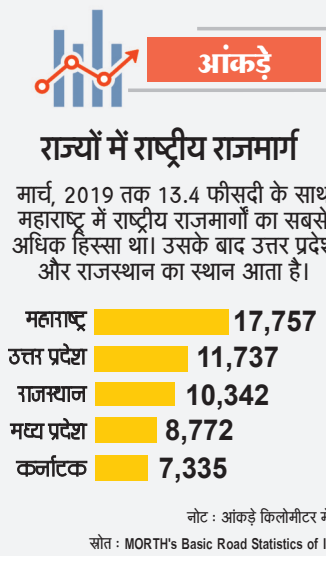

नोट : आंकड़े किलोमीटर में हैं।
स्रोत : MORTH's Basic Road Statistics of India

समाधि ने कहा, 'मुझे मोक्ष देने वाला दिव्य ज्ञान प्रदान करें।' देवी ने कहा, 'तुम वास्तव में संसार की असारता को जान गए हो। तुम्हें ज्ञान प्राप्त हो चुका है।'

देवी का वरदान

अंतर्यात्रा
शिवकुमार गोयल

सुरथ धर्मपरायण तथा दानशील राजा थे। अधर्मी उनसे चिढ़ते थे। एक बार उन्होंने सुरथ पर आक्रमण कर उन्हें पराजित कर दिया। सुरथ वन में मुनि सुमेधा के आश्रम में पहुंच गए। राजा ने उन्हें अपनी कहानी सुनाई। मुनि ने उन्हें धैर्य रखने का सुझाव देते हुए कहा, 'सही समय की प्रतीक्षा करो। देवी की आराधना से तुम्हारा कल्याण होगा।' उन्हीं दिनों समाधि नामक परम धर्मात्मा और संतोषी वैश्य अपने दुर्व्यसनी पुत्र से प्रताड़ित होकर वन में आया। राजा सुरथ से उसकी भेंट हो गई। संकटग्रस्त होने के कारण दोनों मित्र बन गए। सुमेधा मुनि द्वारा बताई गई विधि के अनुसार दोनों जगदंबा देवी की उपासना में लग गए। सुरथ और समाधि ने निर्णय लिया कि यदि देवी प्रसन्न नहीं हुईं, तो वे अग्निकुंड में अपना शरीर अर्पित कर देंगे। जैसे ही यज्ञ अग्नि में वे शरीर की आहुति देने लगे कि देवी ने प्रकट होकर कहा, 'मानव शरीर बड़े भाग्य से सद्कर्मों के लिए मिलता है। इसे इस तरह नष्ट नहीं करना चाहिए।' देवी ने सुरथ को पुनः राजा बनने का वरदान दिया, और समाधि से भी कुछ मांगने को कहा। समाधि ने हाथ जोड़कर कहा, 'मुझे मोक्ष देने वाला दिव्य ज्ञान प्रदान करें।' देवी ने कहा, 'तुम वास्तव में संसार की असारता को जान गए हो। तुम्हें ज्ञान प्राप्त हो चुका है।'

(अमर उजाला आर्काइव से)

पुराने पन्नों से

यूपी के किसान जमींदारों के खूनी पंजे से मुक्त

उत्तर प्रदेश के मंत्रिमंडल ने कल अपनी विशेष बैठक में तय किया कि प्रजातंत्र दिवस पर ही राज्य भर में जमींदारी उन्मूलन व भूमि सुधार कानून को लागू कर दिया जाए। इस कानून पर कल राष्ट्रपति ने हस्ताक्षर कर दिए हैं।इस कानून का 20 लाख जमींदारों पर असर पड़ेगा, जो वर्षों से किसानों का शोषण कर रहे थे।

अमर उजाला,
27 जनवरी, 1951

शिक्षा व्यवस्था में सुधार का सवाल

एक ही विश्वविद्यालय के 9,849 नकलची विद्यार्थियों का पकड़ा जाना उच्च शिक्षा के इतिहास में काला अध्याय है। यह एक बड़ी चुनौती है।

नवीन सिंह पटेल

शिक्षा

संगमनगरी प्रयागराज स्थित प्रोफेसर राजेंद्र सिंह (रज्जू भइया) राज्य विश्वविद्यालय में पिछले दिनों 9,849 नकलची विद्यार्थियों का पकड़ा जाना उच्च शिक्षा के इतिहास में काले अध्याय सरीखा है। यह भी अभूतपूर्व है कि सभी विद्यार्थी एक ही कक्षा (स्नातक तृतीय वर्ष) के हैं। इनमें भी 87 फीसदी उन विज्ञान विषयों से ताल्लुक रखते हैं, जिन्हें आर्ट्स या कॉमर्स के मुकाबले उच्चतर समझा जाता है। इन पर कॉपियों के मूल्यांकन में एक-से जवाब मिलने के बाद शक गहराया, तो परीक्षा केंद्रों के सीसीटीवी फुटेज की जांच कराई गई। इसमें खुलासा हुआ कि परीक्षा कक्ष में बैठे विद्यार्थी एक साथ सिर उठाकर सामने देखते हैं और फिर लिखने लगते हैं। यह नकल बोर्ड पर लिखकर और बोलकर कराई गई थी। कारस्तानी छिपाने के लिए केंद्र व्यवस्थापकों ने ब्लैक बोर्ड की ओर कैमरे नहीं लगाए थे।

चूंकि विश्वविद्यालय प्रशासन ने ही नकल के इस

दुस्साहसिक खेल को न सिर्फ उजागर किया, बल्कि नकलचियों को एक साल के लिए प्रतिबंधित भी किया, इसलिए उसके व्हिसिलब्लोअर बनने को उच्च शिक्षा व्यवस्था में सुधार की कोशिश के रूप में ही लेना चाहिए। हालांकि, पूरब के ऑक्सफोर्ड (इलाहाबाद विश्वविद्यालय) वाले शहर के इस मात्र छह बरस पुराने राज्य विश्वविद्यालय के इस कदम से व्यवस्था में सुधार आ ही जाएगा, इसकी कोई गारंटी नहीं है। हां, यह खतरा जरूर बढ़ गया है कि इस विश्वविद्यालय से प्रतापगढ़, कौशाम्बी, फतेहपुर और प्रयागराज जिले के संबद्ध 653 महाविद्यालयों में आगे दाखिले ही घट जाएं।

दरअसल, उच्च शिक्षा में व्यापक सुधार माध्यमिक और प्राथमिक शिक्षा के अच्छा हुए बगैर संभव ही नहीं है। इस चुनौती को स्वतंत्रता हासिल होने के तुरंत बाद महात्मा गांधी ने शिद्दत से महसूस करते हुए *हरिजन* में लिखा था, 'विश्वविद्यालय चोटी पर होता है। चोटी तभी कायम रह सकती है, जब बुनियाद अच्छी हो।' वैसे, यह बात 50 की उम्र पार कर चुके अभिभावकों को बखूबी याद भी होगी, जब उनके विद्यार्थी जीवन में राजकीय इंटर और डिग्री कॉलेजों में दाखिला पाना कितने गर्व की बात हुआ करती थी। यहां दाखिला मिलना ही इस बात की गारंटी हो जाती थी कि विद्यार्थी कुछ 'बड़ा' बनकर ही निकलेंगे। इनका स्वर्णिम इतिहास ही कुछ ऐसा था। पर, आज स्थिति ऐसी हो गई है कि इनकी प्रयोगशालाएं धूल से अटी पड़ी हैं और पूरे शैक्षिक सत्र में एक-आध बार उपकरणों के दर्शन-लाभ भर से विद्यार्थियों को उत्कृष्ट श्रेणी हासिल करा दी जा रही है। यहां सख्ती हो जाए, तो सीटें भरने के लाले पड़ सकते हैं। वैसे भी लाख जतन करके अभी 26.3 फीसदी छात्र ही उच्च शिक्षा संस्थानों तक पहुंच पा रहे हैं। इसमें उन निजी महाविद्यालयों का आंकड़ा भी शामिल है, जो इसी गारंटी के साथ प्रवेश देते हैं कि क्लासरूम में आए बिना ही अच्छे अंकों में पास की मार्कशीट दिला देंगे! इसी खेल के कारण कुछ दशक पहले तक ठसक से छांट-छांटकर प्रवेश देने वाले एडेड महाविद्यालय भी आज पूरी सीटें नहीं भर पा रहे। इनके दबाव का ही नतीजा है कि उत्तर प्रदेश में शिक्षकों की बायोमीट्रिक हाजिरी के खिलाफ बात हाई कोर्ट तक गई और वहां से राहत नहीं मिलने के बावजूद आठ साल बाद जून-2022 से इसे लागू किया जा सका है।

कॉलेजों में शिक्षक आएंगे तो पढ़ाएंगे ही, यह धारणा कितनी फलीभूत होती है, यह आगे पता लगेगा। वैसे, राष्ट्रीय शिक्षा नीति-2020 में उच्च शिक्षा में सकल नामांकन अनुपात को 26 प्रतिशत से बढ़ाकर 50 फीसदी तक लाने का जो लक्ष्य रखा गया है, संभव है कि उसे हासिल कर लिया जाए, लेकिन क्या इससे गुणवत्ता सुनिश्चित हो सकेगी? नई शिक्षा नीति के नियंताओं को यह सुनिश्चित करना होगा कि शिक्षण से लेकर मूल्यांकन तक की व्यवस्था पारदर्शी और ईमानदार बनाई जाए। यह कुछ पाठ्यक्रमों में बदलाव या राष्ट्रीय आकलन केंद्र 'परख' की स्थापना मात्र से कतई नहीं सुधरने वाला। इसके लिए कैंपस का माहौल पूरी तरह बदलना होगा, जवाबदेह बनाना होगा। जब तक यह नहीं होगा, नकल के काले अध्याय जुड़ते ही रहेंगे।

edit@amarujala.com